सफलता के बाधक तत्व

मनुष्य जीवन में सभी चाहते हैं कि अपना कुछ निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त कर लें अथवा अपनी सफलता को प्राप्त कर लें । इस लक्ष्य की प्राप्ति में अथवा सफलता को प्राप्त करने में अनेक प्रकार के प्रयत्न या पुरुषार्थ करने के पश्चात् भी हमें सफलता नहीं मिल पाती । इस सफलता और हमारे पुरुषार्थ के मध्य में कई प्रकार के विघ्न उपस्थित हो जाते हैं अतः हमारा यह विशेष कर्तव्य है कि सफलता के बीच में व्यवधान उत्पन्न करने वाले विघ्नों को पहचानें, समझें और उनको पहले अपने मार्ग से हटाने का प्रयत्न करें फिर सफलता अपने आप हमारी कदम चूमेगी ।

जिन कारणों से प्रायः हम सफलता को प्राप्त करने में असमर्थ हो जाते हैं, उन व्यवधान उत्पादक विघ्नों में से एक विघ्न है किसी कार्य में 'मन का न लगना' । जिसको कि सामान्य रूप से 'जी चुराना' भी कहा जाता है । इसको योगदर्शन में शास्त्रीय परिभाषा के अनुसार "स्त्यानम्" शब्द से कहा गया है । योगशास्त्र के भाष्यकार ने इसकी व्याख्या करते हुए कहा कि "स्त्यानमकर्मण्यता चित्तस्य" अर्थात् चित्त की अकर्मण्यता को ही स्त्यान कहते हैं ।

हम जो कुछ भी कर्म करते हैं वह तीनों साधनों के माध्यम से ही करते हैं, वे साधन हैं - शरीर वाणी और मन । कोई भी कर्म स्थूल रूप में शरीर के द्वारा किये जाने से पहले मन से ही प्रारम्भ होता है । यदि किसी कार्य को करने की इच्छा मन से ही न हो तो उस कार्य को भला शरीर से हम कैसे कर सकते हैं । यह स्त्यान एक ऐसा विघ्न है जिसमें हमारे मन में या चित्त में ही आलस्य होता है, कार्य करने की इच्छा ही उत्पन्न नहीं होती । वैसे भी हम मन से ही सर्वाधिक कार्य करते हैं, असंख्य कार्य करते हैं । किसी भी कार्य की प्राथमिक योजना मन से ही बनती है। यदि मन में ही इच्छा न हो तो फिर स्थूल कार्य कैसे हो सकते हैं ?

प्रायः यह देखा जाता है कि जब कोई कार्य कठिन लगे तो उस कार्य से व्यक्ति बचना चाहता है । विद्या अध्ययन के समय जो विषय समझ में नहीं आता अथवा उसको समझने में अधिक बल लगाना पड़ता है, बुद्धि लगानी पड़ती है, अधिक मेहनत करना पड़ता है, रटना पड़ता है, उस विद्या प्राप्ति रूप कार्य से वह विद्यार्थी उस समय जी चुराता है और कोई दूसरा हेतु वा कारण बताकर उस कार्य को टालना चाहता है । ऐसी स्थिति में वह विद्यार्थी कभी भी विद्या अध्ययन में सफल नहीं हो सकता ।

यह एक ऐसा विघ्न है जिसके होने से जीवन में और अनेक प्रकार के दुःख क्लेश, समस्याएं, उत्पन्न हो जाती हैं । इस अकर्मण्यता के कारण समाज में अनेक लोग आलस्य आदि से युक्त होकर जीवन को नष्ट करते रहते हैं । इसी अकर्मण्यता के कारण हमारे देश में भिखारियों की संख्या बढ़ गयी है । कुछ लोग साधुओं का वेश धारण कर हाथ पर हाथ बांधे बैठे रहते हैं ।

यदि देश के सभी साधू-संन्यासी तथा भिखारी लोग भी आलस्य-प्रमाद छोड़कर अत्यन्त पुरुषार्थ करते तो हम कल्पना भी नहीं कर सकते कि आज हमारे देश की क्या स्थिति होती, समग्र विश्व में सर्वप्रथम प्रगतिशील देश कहलाता ।

यह एक ऐसा दोष है, ऐसा विघ्न है जिससे कि न केवल लौकिक क्षेत्र में ही व्यक्ति असफल होता है बल्कि इसके रहते अध्यात्मिक क्षेत्र में भी व्यक्ति कभी सफल नहीं हो सकता क्योंकि अध्यात्मिक क्षेत्र में तो इससे भी अधिक मानसिक कार्य या आतंरिक कार्यों को करना पड़ता है । मन को पूर्ण रूप से नियन्त्रण में रखते हुए सब प्रकार के लौकिक विचारों को रोकना होता है । यहाँ तक कि लौकिक विचारों को मन में भी आने नहीं देना होता है और जो अपना ध्येय विषय है केवल उसी का ही चिन्तन, मनन करना होता है, उसके अतिरिक्त कोई भी विषय मन के अन्दर प्रविष्ट नहीं होना चाहिए । इसी को योगाभ्यास कहते हैं ।

हमारे मन में बहुत अधिक सामर्थ्य रहता है । यदि हम अपने इस मानसिक सामर्थ्य का सही रूप में उपयोग करते हैं तो कठिन से कठिन कार्य भी सरलता से सम्पन्न हो जाता है । वेद मन्त्रों के अनुसार "यस्मिन् ऋचः साम यजुंषी तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु" जिस मन के अन्दर चारों वेद स्थित हैं वह मेरा मन कल्याणकारी संकल्प वाला होवे । यदि हम अच्छी प्रकार से मानसिक पुरुषार्थ करें तो चारों वेदों के भाष्य तक कर सकते हैं और जीवन का जो अंतिम लक्ष्य ईश्वर प्राप्ति है, उसको भी प्राप्त करके जीवन को सफल बना सकते हैं । परन्तु इन सब लक्ष्य-प्राप्ति के लिए "स्त्यान नामक मानसिक अकर्मण्यता" को त्यागना होगा जो की सब प्रकार की उन्नति में अत्यन्त घातक है ।

लेख - आचार्य नवीन केवली